ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(11): 351-353
www.allresearchjournal.com
Received: 10-09-2021
Accepted: 16-10-2021

डॉ. संतोष कुमार सिंह
सहायक आचार्य, हिंदी–विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ. संतोष कुमार सिंह
सहायक आचार्य, हिंदी–विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

निराला के काव्य में मानव मुक्ति की कामना

डॉ. संतोष कुमार सिंह

प्रस्तावना

व्यक्तित्व अगर गरिमामाय हो तो रचना अपने गरिमामय स्वरूप को स्वतः प्राप्त कर लेती है। निराला के आत्मविश्वास पूर्ण व्यक्तित्व से ही उनके सामाजिक बोध के अस्तित्व का पता चलता है। लेकिन यह अस्तित्व भावना निराला में थी या नहीं कह पाना सम्भव नहीं। व्यक्तित्व की चेतना जहाँ व्यक्ति को आत्मतुष्ट बनाती है, वहीं अस्तित्व की चेतना आत्मतुष्टि के विघटन में सहायक होती है। व्यक्ति का सामाजिक अस्तित्व क्या है यह दूसरों की दृष्टि में होना लाभकारी है, स्वयं व्यक्ति की दृष्टि में नहीं। सर्वमान्य अवस्थाओं पर विश्वास निराला का व्यक्तित्व नहीं है। उनकी अनुभूति सहज होते हुए भी विशिष्ट है और अभिव्यक्ति की विशिष्टता तो सर्वविदित है ही। बासी और अर्थहीन होते हुए शब्दों में नई लय ताल की जान डालते हुए उसे नये माहौल में व्यक्त कर हमारी संवेदना की मशीन को तीव्र गति प्रदान की है। भाव शब्दों के साथ एकाकार होते हुए से जान पड़ते हैं जिसके भीतर अर्थबोध की असीम सम्भावनाएँ होती हैं। अलौकिक प्रिय के प्रति निराला की जो अनुभूति है वह 'मरण–दृश्य' कविता में समूचे अनुभव के साथ अवतरित हुई है–

स्कल साभिप्राय
समझ पाया था नहीं मैं
थी तभी यह हाय!
दिये थे जो स्नेह चुम्बन
आज प्याले गरल के घन
कह रही हो हँस पियो प्रिय
पियो प्रिय निरूपाय
मुक्ति हूँ, मृत्यु में
आयी हुई न डारों!''

यहाँ प्रिय का मृत्यु में मुक्ति के रूप में आना विरोधाभास है, परन्तु संकट के समय में सम्पूर्ण दुख दर्द से मुक्ति देना या आरोग्य प्रदान करना प्रिय के प्रेम का पूर्ण निष्ठा से व्यक्त होना ही सार्थक है। वाक्य शब्द और अर्थ को कवि ने यहाँ नये सम्बन्धों की आधार शिला पर गढ़ा है। वैसे इन विरोधाभासों में ही कवि निराला का जीवन सौन्दर्य प्राप्त करता है।

परतंत्रता की पीड़ा झेल रहे देश में सामाजिक क्रांति के स्वर को तीव्र करने के लिए उन्होंने देशवासियों के ह्रदय में चिर–प्रसुप्त शक्तियों को उद्दीप्त करने का प्रयत्न किया। उनकी अकर्मण्यता पर खेद व्यक्त करते हुए कवि प्रमाद और आलस्य में डूबे हुए लोगों को जगाकर एक बार फिर उन्हें कर्त्तव्य मार्ग पर चलने को कहता है–

उगे अरूणाचल में रवि
आयी भारती–रति कवि कंठ में
क्षण–क्षण में परिवर्तित
होते रहे प्रकृति पट
गया दिन आयी रात
गयी रात खुला दिन
एक ही संसार के बीते दिन, पक्ष, मास
वर्ष कितने ही हजार
जागो फिर एक बार।।''

परिवर्तन के अटल नियम से कवि देशवासियों को परिचित कराना चाहता है। समय हमेशा परिवर्तन की मांग करता है। किसी उर्दू शायद की ये पंक्तियाँ इन भावों से मेल खाती हैं–

''सुबह होती है, शाम होती है, उम्र यूँ ही तमाम होती है।''

यहाँ निराला व्यक्ति को जीवन मूल्य का बोध कराते हैं। सोये हुए व्यक्ति को जगाना आसान है लेकिन जागते हुए को जगाना आसान नहीं। ऐसा ही चुनौती पूर्ण कार्य निराला को भाता है। इसी कविता के दूसरे भाग में वे देशवासियों को उनका इतिहास याद दिलाते हैं– जिनमें महाभारत का संग्राम जीतकर चक्रवर्ती सम्राट होने की क्षमता है। सवा लाख शत्रुओं के लिए भारत का प्रत्येक वीर पर्याप्त है, ऐसा हौसला रखने वाले गुरूगोविन्द सिंह का नाम क्या तुम भूल गये? क्या सिंहनी के गोद से उसके पुत्र को छीनने का प्रयत्न कोई कर सकता है? शत्रु को तुम्हारी शक्ति का आभास होना चाहिए। तुम्हारे लिए कोई भी कार्य कठिन नहीं–

''महामंत्र ऋषियों का
अणुओं परमाणुओं में फूँका हुआ
तुम हो महान, तुम सदा हो महान्
है नश्वर यह दीन भाव
कायरता, कामपरता
ब्रह्म हो तुम
पद रज भर भी है नहीं
पूरा यह विश्व भार
जागो फिर एक बार।।''

भारत के प्रति यह ओजस्वी भाव देष मुक्ति के साथ–साथ सामाजिक मानव मुक्ति के साथ भी जुड़ा हुआ है। व्यक्ति को स्वंय की शक्ति का आभास होना उसकी विजय यात्रा का पहला चरण हैं जैसे जामवंत ने हनुमान जी की सोई हुई शक्ति को जगाया था वैसे ही निराला अतीत का गौरवगान कर वासता की त्रासदी झेल रहे भारत वासियों को जगाना चाहते हैं। ऐसा ही मंतव्य किसी कवि की इन पंक्तियों में भी दृष्टिगत होता हैं–

कठिन बने उनको सरल, सच्चा यदि मंतव्य।
कर्मठ और पुरूषार्थी ही? पा जाते गंतव्य।।

निराला जिसके पुत्र हैं, जिससे प्रकाश पाते हैं, उसी माँ भारती से वे भारत में स्वतंत्रता की अमर ध्वनि भरने की प्रार्थना करते हैं। वे चाहते हैं कि सभी मिं उसी का प्रकाश हो, जिससे आत्मबोध का उदय हो, सर्वत्र स्वाधीनता की अनुगूँज सुनाई दे, पुरातनता को छोड़कर लोग नवीनता का आलिंगन करें।–

नव गति नव लय ताल–छन्त नव
नवल कंठ, नव जलद मन्द्र रव
नव नभ के नव विहग वृन्द को
नव पर नव स्वर दें!

नवजागरण का शंखनाद करने वाले निराला सदा ही नवीनता के पक्षधर रहे जिस संस्कृति को लोग अपरिवर्तनीय मानते है, उसको भी परिवर्तित करने के लिए वो संघर्ष करते हैं। हमेशा से गुलाब अपनी सुन्दरता के लिए जाना जाता रहा है लेकिन निराला कुकुरमुत्ता को उससे लड़ाते हैं और कल्पना की समाहार शक्ति के द्वारा उसे प्रतिष्ठित करते हैं। यह कुकुरमुत्ता सर्वहारा वर्ग का प्रतीक है। निराला कहते हैं ऐसी सुन्दरता जो दूसरों का हक मारकर अर्जित की गई है उसे धिक्कारना चाहिए।

'अबे सुन बे गुलाब
भूल मत जो पाई खुशबू रंगोआब।''

यहाँ निराला श्रम का सौन्दर्य दिखाना चाहते हैं। यह उस सर्वहारा वर्ग की संघर्षशीलता ही है जिसमें कुकुरमुत्ता लोगों को अपने में सौन्दर्य देखने के लिए कहता है। व्यक्ति को संघर्ष करना चाहिए। सदियों से चली आ रही परम्परा को लोगों के मस्तिष्क से आसानी से नहीं निकाला जा सकता लेकिन चिन्तन होना चाहिए क्योंकि चिन्तन और कल्पनाशीलता मनुष्य का स्वयं का गुण है। समाज को बदलने का कार्य निराला लोगों की सोच बदलकर करना चाहते हैं। यहाँ निराला सुन्दर लोगों को ही प्रतिष्ठित करने की भावात्मक संस्कृति पर सवाल खड़ा करते हैं। इसके अलावा लोक कल्याण के लिए (सर्वहारावर्ग) वह दूसरा मार्ग क्रान्ति का भी बताते हैं। जब अस्तित्व का प्रश्न आता है तो शक्ति सम्पन्न लोग अपने से कमजोर के ऊपर चढ़कर अपनी ऊँचाई का प्रदर्शन करना चाहते हैं, जबकि उनका अस्तित्व उसी मजदूर उसी मजदूर और सर्वहारा वर्ग से है। इसी सर्वहारा वर्ग को अपना हक दिलाने के लिए निराला उनके अन्दर विद्रोह की भावना बादल के माध्यम से जगाना चाहते हैं, क्योंकि हम मुक्ति तभी पाते हैं, जब हम अपना अधिकार पाते हैं। इसी सामाजिक विषमता को देखकर निराला का अन्तःकरण द्रवित हो उठता है। ''तोड़ती पत्थर'' कविता पत्थर तोड़ने वाली उस श्रमिक युवती की करूण कथा है जो पत्थर तोड़कर अपना पेट पालती है। पत्थर तोड़कर उसके मूल्य से पेट पालना कोई बुरा कार्य नहीं हैं, लेकिन शरीर को दग्ध कर देने वाली सूर्य की गर्मी में भी कार्य करने के लिए बाध्य करने वाली उस सत्ता का जो मानव होने के अपने मूल्य को तो समझता है लेकिन दूसरों के मूल्य को नहीं, उसे समाज में मानव होने का अधिकार नहीं मिलना चाहिए। क्रान्ति ही वह एक मात्र ब्रह्मशास्त्र है जिसके द्वारा सामाजिक समता लाई जा सकती है। निराला की यह कविता आर्थिक मुक्ति के चिन्तन की ओर भी हमारा ध्यान आकृष्ट करती है। महिलाओं का आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होना उन्हें मानसिक गुलामी के पिंजड़े से मुक्ति दिलायेगा। आर्थिक विपन्नता ही निराला को यह स्वीकार करने के लिए बाध्य कर देती हैं–

''धन्ये मै पिता निरर्थक था, कुछ भी तेरे हित न कर सका।''

उनकी यह आर्थिक तंगी इसीलिए है कि वे कभी निर्बल व्यक्ति का अन्न नहीं छीन सके। औरों का दुख देखकर वे अपना गम भूल जाते हैं। यही भाव उनमें कामायनी के इस आत्मिक सुख की सर्जना करता है––

''औरों को हॅसते देखो मनु, हॅसो और सुख पाओ।
अपने सुख को विस्तृत करलो, जीवन सुखी बनाओ।

भिक्षुक कविता में निराला ने सामाजिक विषमता और मानव दीनता का ऐसा करूण चित्र खींचा है जो मानव का एक दूसरे मानव के प्रति संवेदनहीनता का ही परिचायक है। तुलसी की यह उक्ति ''आगि बड़वागि ते बड़ी है आग पेट की'' यह पेट की आग ही मानव को जानवर बनने के लिए विवश करती है–

दाता भाग्य विधाता से क्या पाते?
घूँट आंसुओं के पीकर रह जाते
चाट रहे जूठी पत्तल वे सभी सड़क पर खड़े हुए,
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए।

अंधविश्वासों और वाह्यडम्बर से निराला जीवन पर्यन्त लड़ते रहे। धार्मिकता को जो लोग स्वयं का उल्लू सीधा करने का साधन

मानते थे निराला को उनसे चिढ़ थी। उनका ह्रदय किसी भी चीज के मिथ्या रूप का वरण नहीं करता। ''सरोज स्मृति'' कविता में उनका यह रूप उभरकर सामने आता है। सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था के प्रति उनका जो विद्रोह है उसकी वास्तविक छवि का बहुत कुछ हिस्सा बीज रूप में यहाँ मिल जाता है। सम्पादकों द्वारा निराला की मुक्त छनद की कविताओं का लौटाया जाना साहित्यिक सत्ता द्वारा निराला की मानसिक वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति है कान्यकुब्ज ब्राह्मणों को वे कुल में आग लगाने वाला कहकर तिरस्कृत करते हैं क्योंकि व्यक्ति की महानता जन्म में नहीं बल्कि कर्म में होती है। सामाजिक रूढ़ियों को तोड़ते हुए एकदम नये ढंग से कन्या का विवाह करना ब्राह्मणों की सत्ता को खुलेआम चुनौती देना था। ''दान'' कविता में भी वे उन ढोंगी ब्राहमण भक्तों पर प्रहार कतरे हैं जिन्हें दीनहीन लोगों की दीनता नहीं दिखाई देती बल्कि बन्दरों को दान में पुए खिलाकर आनन्द और गर्व का अनुभव करते है। तथा अपने को मानवों में श्रेष्ठ मानव घोषित करते हैं। 'कुल्ली भाट' में भी कुल्ली के निधन पर वे खुद उसका वैदिक रीति से अंतिम संस्कार करते हैं। एक दलित के घर जाना, जिसकी पत्नी मुस्लिम है, उस समय की मानसिकता में ब्राहमणों की पवित्रता पर प्रश्न चिन्ह लगाता है इसी कारण ब्राहमण समाज स्वयं निराला को उसी श्रेणी में डाल देता है। लेकिन निराला तो मन रंगाने के पक्षधर हैं, कपड़ा रंगाने का ढोंग उनके व्यक्तित्व में नही।

वैसे भी छायावादी कवियों को मर्यादा का बन्धन नहीं भाता। उसमें भी निराला सामाजिक रूढ़ियों और मर्यादा के नैतिक बन्धनों की श्रृंखला कड़ियों को उसी प्रकार तोड़कर फेंकते हैं जैसे हनुमान जी मोतियों की माला में राम की छवि न दिखाई देने पर उसे तोड़कर फेंकते हैं। निराला तो वो शाहंशाह हैं जिन्हें कोई परम्परा, कोई मर्यादा नहीं बांध पाई। सिद्धान्त के अक्खड़ और स्वभाव के फक्कड़ इस महापुरूष की जीवनी शक्ति हजारी प्रसाद द्विवेदी के ''कुटज'' से कहीं अधिक थी। निराला का क्रांतिकारी व्यक्तित्व कबीर के व्यक्तित्व से काफी कुछ मेल खाता है। इन दोनों की वाणी में अर्जुन के गाण्डीव सी टंकार हैं। इन दोनों ही रचनाकारों पर यह बात एकदम खरी उतरती है–

''बात वो बात है जो बात बता देती है।
बात इंसान की औकात बता देती है।।''

''राम की शक्ति पूजा'' में आत्मिक शक्ति को जगाने का नया चिंतन सामने आता है। यह दार्शनिक चिन्तन भारतीय परम्परा का चिंतन है जिसे निराला से पहले परमहंस और विवेकानन्द जी अभिव्यक्त कर आये थे लेकिन परम्परागत राम कथा के माध्यम से वे राम की कमजोरियों को पहले दिखाकर फिर उनमें शक्ति का संचार करते हैं जबकि बालमीकि, तुलसी, केशव, मैथिली शरण गुप्त, आदि किसी की भी राम कथा में राम को कमजोर नहीं दिखाया गया है यह 'राम की शक्ति पूजा' हमें गिर–गिरकर उठने की प्रेरणा और शक्ति देती है। यही निराला के महाप्राणत्व की प्रतिष्ठा है।

सम्बन्धों के स्तर पर चिंतन की जो मुक्ति है वह ''जुही की कली'' मूर्तिमान हो उठती है। अटूट सम्बन्ध का सबसे बुनियादी तत्व है एक दूसरे पर पूर्ण विश्वास। इसके अभाव में कोई भी रिश्ता या सम्बन्ध बहुत दिनों तक टिक नहीं पाता। अभी तक परम्परा में जितनी भी नायिकायें थी, वे सभी प्रिय के वियोग में रात–रातभर जागती, तड़पती और आंसू बहाती थीं, लेकिन निराला की इस कविता में पहली बार नायिका अपने प्रिय पर पूर्ण विश्वास कर यौवन की मदिरा पिये हुए गहन निंद्रा में सो रही है। जहाँ ऐसा प्रेम भरा निर्भय विश्वास होगा, वहाँ संबंधों में आजादी का उन्मुक्त गग नही मानवीय संबंधों और संवेदनाओं के चिंतन का विशाल प्रांगण होगा।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मानव मुक्ति का पहला अध्याय है भारत का स्वतंत्रता आन्दोलन इसी मुक्ति कामना से प्रारम्भ हुआ। सार्वजनिक मुक्ति के साथ–साथ इसमें स्वंय की मुक्ति का भी अंकुर छिपा हुआ था और छायावाद तक आते–आते यह व्यक्तिवादी भावना में परिणित हो गया।

नये भाव बोध और गम्भीर अर्थवत्ता के साथ सीधी सपाट बयानी निराला की अपनी 'मैं शैली' है। जिसमें दुख की छाया पड़ते ही वेदना का सागर उमड़ने लगता है। यहाँ बौद्धिकता नहीं, ह्रदय की सहजता है जो उन्हें सदियों से यातना भोग रहे लोगों के हित में चिंतन करने के लिए मजबूर करती है।

छन्द के पिंजरे से काव्य भाषा को मुक्ति देना परम्परा से लीक पर चलने वाली कविता को बेलीक चलने को विवश कर देना निराला की अदम्य काव्य प्रतिभा का ही परिचायक है। कवि होने के कारण जो प्रकाश उन्हें मिला है उसी भाव बोध का आलोक हम निराला की साहित्य साधना में पाते है।–

''अशब्द अधरों का सुना भाष, मैं कवि हूँ पाया है प्रकाश''

वे शब्द जो अधरों से निकल नहीं पाते, अपनी पीड़ा को अभिव्यक्ति नहीं दे पाते, घुटती, तड़पती, दमतोड़ती मानव ह्रदय की उन भावनाओं को निराला का कवि ह्रदय महसूस करता है, उनके ह्रदय पर कान रखकर उनकी हर धड़कन की आवाज सुनता है। मानव मन जो चाहता है, सच्चे अर्थों में उसी की प्रतिष्ठा समाज में करने का प्रयास ही मानव मुक्ति का चिनतन है। जो सामाजिक नियम कानून बनाये गये हैं कई बार हमारा मन उनको स्वीकार नहीं करता। यह अस्वीकरण ही मानव को परम्परागत चिंतन से मुक्त करता है। जो धारण करने योग्य हो वही धर्म है, जिसे हमारी आत्मा स्वीकार करे वही मुक्ति है, आजादी है, स्वतंत्रता है, विचारों की, भावों की, आदर्शों की और साहित्य की।

संदर्भ

1. निराला संचयिता (अनामिका से) सम्पादक– डॉ० रमेशचन्द्र शाह, पृष्ठ सं0 116–117 वाणी प्रकाशन, संस्करण – 2001
2. राग–विराग–सम्पादक–रामविलास शर्मा, पृ0 सं0 52 लोक भारती प्रकाशन संस्करण 2006
3. वहीं पृ0 60
4. निराला संचयिता (गीतिका से) पृ0 57
5. निराला रचनावली भाग–2 (नये पत्ते से), पृ0 50
6. निराला रचनावली भाग–1 (अनामिका से), पृ0 315 संस्करण 1998 राजकमल प्रकाशन
7. कामायनी–जयशंकर प्रसाद (कर्म सर्ग), पृ.सं. 41 विद्यासागर प्रकाशन 1990
8. निराला रचनावली भाग–1 पृ0 77
9. वही पृ0. 315